Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में आलंकारिक निरूपण

हसन खाँ
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग,
जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर, मध्य प्रदेश, भारत।

Article Info
Volume 3, Issue 6
Page Number: 01-06
Publication Issue :
November-December-2020

Article History
Accepted : 01 Nov 2020
Published : 05 Nov 2020

ABSTRACT

सारांश :– भारवि ने उन्मुक्त रूप में अलंकारों का प्रयोग किया है किन्तु अलंकार के समुचित प्रयोग तथा आकर्षक संयोजन में कवि पूर्ण सफल है। काव्यरचना में अलंकृत काव्यशैली रूप इस नवीन रीति के भारवि स्वयं जनक हैं। इस तरह कवि की अलंकार प्रियता पर भी प्रकाश पड़ता है । इस अलंकृत शैली के विनियोग से निश्चित रूप से काव्य का बाह्य स्वरूप बहुत ही सुसज्जित तथा चित्ताकर्षक हुआ है। काव्य का शरीर तो अवश्य ही अत्यन्त अलंकृत है।

मुख्यशब्द :– काव्यशैली, अलंकार, किरातार्जुनीयम्, भारवि, संस्कृत, साहित्य, काव्य, रीति, शरीर।

संस्कृत–साहित्य में कवियों की इयत्ता की गणना नहीं, परन्तु नीर – क्षीर विवेकी सहृदय संस्कृत–साहित्य पाथोधि पारङ्गत विद्वद्वर्ग में सम्मान के पात्र दो–चार कविती उपलब्ध होते हैं। कविकृतियों में भारवि–प्रणीत किरातार्जुनीयम् पर विचार करे ं तो बृहत्त्रयी और पञ्च काव्यों मे ंभी यह ग्रन्थरत्न ने अत्यन्त अनुपम अपना स्थान सुरक्षित किया है। बहृत्त्रयी मे तीन महनीय महाकाव्यों की गणना की गयी है उनमें भारवि का किरातार्जुनीय, माघ का शिशुपालवध तथा श्रीहर्ष का नैषधीयचरित चर्चित है। किरातार्जुनीयम् महाकाव्य का बृहत्त्रयी महाकाव्यों में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त होने का मुख्य कारण अपने प्रशस्त गुणों से है। किरातार्जुनीयम् महाकाव्य का बृहत्त्रयी काव्य परम्परा में अग्रणी बना हुआ है। किरातार्जुनीयम् महाकाव्य की कथावस्तु अष्टादश सर्गों में विभक्त है। महाभारत के वनपर्व में चर्चित पाण्डवचरित के आधार पर किरातार्जुनीय महाकाव्य की रचना हुई है। यत्र– तत्र घटनाओं में कुछ परिवर्तन एवं परिष्कार करके कथा को अधिक सरस तथा हृदयग्राही बनाया

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

है। और इस प्रकार अति संक्षिप्त लघु कथानक के ऊपर अष्टादश सर्गीय विशाल महाकाव्य के प्रासाद को प्रतिष्ठित किया है। अपनी प्रवण विचार – शक्ति द्वारा अद्‌भुत कल्पनाओं की उद्‌भावना करके काव्य के कलेवर का संवर्द्धन करके उसको एक मनोहर काव्य का रूप प्रदान किया है। इसी प्रकार महाकवि भारवि ने अपने महाकाव्य किराजार्तुनीयम् महाकाव्य में अलंकारिक वर्णन काव्यानुकूल किया है जो अवलोकनीय है –

महाकाव्य में वर्णित अलंकार योजना से पूर्व अलंकार के स्वरूप और उद्‌भव को जान लेना अत्यन्त आवश्यक है जिससे उक्त विषय पूर्णतया स्पष्ट हो सके।

'अलंकार' शब्द प्रयोग बड़ा ही प्राचीन है। ऋग्वेद में **'अंगकृति'**[1] शब्द आया है जो अलंकृति का ही रूपान्तर है । रुद्रदामन के शिलालेख (द्वितीय शताब्दी ईस्बी) में 'अलंकृत' गद्य और पद्य की चर्चा आयी है। भरत के नाट्यशास्त्र में गुण के साथ 'अलंकार' का भी उल्लेख हुआ और मुनिप्रवर ने नाटक के चार अलंकार बताये हैं – उपमा , रूपक ,दीपक और यमक। कुछ प्राचीन आचार्यों ने ने तो काव्यशास्त्र के लिए अलंकार शास्त्र शब्द का प्रयोग किया है। लोक में हार , अंगद आदि को अलंकार कहा जाता है और साहित्य शास्त्र में यमक , उपमा रूपक आदि को अलंकार कहते हैं।

अलंकार शब्द की व्युत्पत्ति **'अलम्'** पूर्वक **'कृ'** धातु से **घञ्** प्रत्यय करने पर **'अलंकार'** शब्द बनता है। **अलंकरोति इति अलंकारः** अर्थात् शब्द और अर्थ के उपस्कारक (वैचित्र्य– विधायक) धर्म को अलंकार कहते हैं। अलंकार शब्द की करण – प्रधान व्युत्पत्ति इस प्रकार है –.

'अलंक्रियते अनेन इति अलंकारः।' [2]

इस व्युत्पत्ति के अनुसार शब्द और अर्थ के वे धर्म अलंकार कहे जाते है जो उन्हें सुशोभित या उत्कृष्ट बनायें ।

अलंकार के स्वरूप को स्पष्ट करने के उपरान्त अब हम किरातार्जनीयम् महाकाव्य में अलंकार निरूपण का वर्णन करते है जो इस प्रकार द्रष्टव्य है –

अलंकारों के प्रयोग में कवि भारवि अत्यन्त प्रवीण हैं और काव्य में अलंकारों के प्रति इनकी रुचि दिखलाई पड़ती है तथा रुचिकर अलंकारों के सन्निवेश से काव्य यथास्थान और यथासम्भव अलंकृत करने का प्रयास किया है। इन्होंने अलंकारों के सन्निवेश तथा अप्रस्तुत विधानों को काव्य में प्रधानता प्रदान की है। अलंकारों तथाउ शाब्दिक चमत्कारों द्वारा कवि ने अपने काव्य को खूब सुसज्जित किया है एवं इनके हृदयाभिराम प्रयोग द्वारा अपनी विदग्धता का भी परिचय प्रस्तुत किया है। इस प्रकार किरातार्जुनीय में सर्वत्र अलंकारों की छवि दृष्टिगोचर होती है।

भारवि ने शब्दालंकारों तथा अर्थालंकारों का यथा स्थान समुचित प्रयोग किया है। उपमा , उत्प्रेक्षा , अर्थान्तरन्यास , काव्यलिंग , निदर्शना , समासोक्ति , स्वभावोक्ति , अतिशयोक्ति , रूपक इत्यादि अलंकारों का

[1] ऋग्वेद १.१२४.६ , १ – १६४ , २०, १ – १६४, ११

[2] छन्दोऽलंकार मंजूषा , पं0 लक्ष्मीकान्त दीक्षित।

कवि ने वैदुष्यपूर्ण प्रयोग किया है। शब्दालंकारों में श्लेष तथा यमक का चमत्कारात्मक प्रयोग हुआ है। अन्य अलंकारों के साथ श्लेष का अत्यन्त मनोहर प्रयोग हुआ है। यथा श्लेष अनुप्राणित उपमा का हृदयहारी चित्रण कवि ने प्रस्तुत किया है –

गुणनुरक्तामनुरक्तसाधनः कुलाभिमानीकुलजां नाराधिपः।

परैस्त्वदन्यः क इवापहारयेन्मनोरमामात्मवधूमिवश्रियम्।।[3]

उपमा के प्रयोग में कवि अत्यन्त कुशल है और इसके मनोज्ञ चित्रण के कारण इनकी **'आतपत्र भारवि'** से प्रसिद्धता है। अन्तरिक्ष में वात्या प्रेरित मण्डलाकार में उड़ते हुए पीतवर्ण के पराग कनकमय आतपत्र की लक्ष्मी को धारण कर रहे हैं –

उत्फुल्लस्थलनलिनीवनादभुष्मादुद्धूतः सुरसिजसम्भवः परागः।

वात्याभिर्वियति विवर्तितः समन्तादाधत्ते कनकमयातपत्रलक्ष्मीम्।।[4]

प्राप्त नवयौवना तथा पाण्डुर वर्ण वाली प्रेयसी के समान परिपाक दशा को प्राप्त धान्यराशि के कारण गौर वर्ण भूमि के पास नायक की तरह अर्जुन गये , शब्दायमान नायिका की मेखला के समान जहाँ पर कलहंस मधुर शब्द कर रहे थे –

ततः सकूजत्कलहंसमेखलां सपाकसस्याहितपाण्डुतागुणाम्।

उपाससादोपजनं जनप्रियः प्रियामिवसादितयौवनां भुवम्।।[5]

इस रूपक के माध्यम से कवि कल्पना की कमनीयता का प्रकाशन सुन्दर रूप में हुआ है। अर्जुन ने वनराजरूपी युवतियों को देखा , जो सप्तवर्ण के पीत परागरूपी पवन प्रेरित उत्तरीय को शरीर से दूर होने से रोक रहीं थीं, बाणपुष्प ही जिनके निर्मल खुले नेत्र थे तथा विकसित पुष्प जिनके मधुर हास। यहाँ का आरोप किया गया है –

विपाण्डु संख्यानमिवानिलोद्धतं निरुन्धतीः सप्तपलाशजं रजः।

अनाविलोन्मीलितबाण चक्षुषः सपुष्पाहासा वनराजि योषितः ।।[6]

कवि की उत्प्रेक्षाएँ बहुत ही मनोहर तथा व्यापक हैं। इन उत्प्रेक्षाओं के द्वारा कवि – कल्पना की उड़ान तथा उसकी सूक्ष्म निरीक्षण दृष्टि का ज्ञान होता है। श्याम वर्ण के भ्रमरों की कवि ने लोहश्रृंखला के रूप में सुन्दर उत्प्रेक्षा की है। मार्गजनित श्रम के कारण गजपति को नींद आ गई। उसके कुम्भस्थल से स्रावित मदजल पृथिवी पर फैल गया और वहाँ पर भ्रमर एकत्रित हो गए। निद्राभंग होते ही गजपति सम्भ्रमपूर्वक चलने लगा , जिससे वह भ्रमर पंक्ति छिन्न – भिन्न हो गई , मानों उसके पैर में पड़ी हुई लौहश्रृंखला टूट गई –

[3] किरातार्जुनीयम् (१.३१) डॉ0 बाबूराम त्रिपाठी।
[4] किरातार्जुनीयम् (५.३६) डॉ0 बाबूराम त्रिपाठी।
[5] किरातार्जुनीयम् (४.१) डॉ0 नर्मदेश्वर कुमार त्रिपाठी।
[6] किरातार्जुनीयम् (४.२८) डॉ0 कविराम कैलाश पाण्डेय।

प्रस्थानश्रम जनितां विहाय निद्रा मामुक्ते गजपतिना सदानपंके।

शय्यान्ते कुलमलिनां क्षणं विलीनं संरम्भच्युतमिव शृंखलं चकाशे।।[7]

भारवि के काव्य में काव्यलिंग का प्रायशः सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है। सिंहासनारूढ सकल साधनसम्पन्न होने पर भी राजा दुर्योधन समस्त साधनविहीन वनवासी युधिष्ठिर से पराजय की आशंका बराबर करता ही रहता है और इसलिए द्यूतक्रीड़ा के छद्म से जीती हुई पृथ्वी को अब नीति द्वारा जीतने का प्रयास रहा है –

विशंकमानो भवतः पराभवं नृपासन स्थोऽपि वनाधिवासिनः ।

दुरोदरच्छद्म जितां समीहते नयेन जेतुं जगतीं सुयोधनः।।[8]

इसी प्रकार समासोक्ति की सुन्दर छटा कवि में दर्शनीय है । प्रसिद्ध यश वाले , दयालु तथा सभी तरह से सुरक्षा द्वारा प्रजाओं को अभ्युदय प्रदान करने वाले एवं कुबेर के सदृश दुर्योधन के सद्गुणों से द्रवित हुई वसुन्धरा स्वयं ही एसके लिए धनों का दोहन कर रही है –

उदार कीर्तिरुदयं दयावतः प्रशान्तबाधं दिशतोऽभिरक्षया।

स्वयं प्रदुग्धेऽस्य गुणैरुपस्नुता वसूपमानस्य वसूनि मेदिनी ।।[9]

अर्थान्तरन्यास भारवि का अति प्रिय अलंकार है। इसके प्रति पक्षपात होने के कारण किरातार्जुनीय में इसका बहुल प्रयोग पाया जाता है। इस अलंकार की योजना अद्भुत है, जो कवि के अधिकार को अभिव्यक्त करती है। समुद्रपर्यन्त पृथिवी पर एकच्छत्र शासन वाला दुर्योधन सर्वसम्पन्न होन पर भी साधना स्वभाव वाले युधिष्ठिर से आने वाले भय की चिन्ता किया ही करता है ; क्योंकि बलवानों के साथ विरोध दुःखद परिणाम वाला होता ही है –

प्रलीनभूपालमपि स्थिरायति प्रशासदावारिधि मण्डलं भुवः ।

स चिन्तयत्येव भियस्त्वदेष्यतीरहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता ।।[10]

काव्य में अर्थ गरिमा का अधिकांश श्रेय इसी अलंकार को है। इसके प्रयोग के कारण अनेक अर्थगरिमामयी तथा ह्रदय स्पर्शी सूक्तियों का उद्भव काव्य में हुआ है। इन गुणों के साथ – साथ काव्य को सरस रोचक बनाने में इस अलंकार का विशेष योगदान है।

इसी प्रकार भारवि ने श्लेष तथा यमक का बहुत ही चमत्कारात्मक प्रयोग किया है। पंचम सर्ग में यमक की अनूठी छटा प्रस्फुटित हुई है। यथा कदम्ब तथा तमाल से सुशोभित हिमालय का चित्रण है, जिससे हिमजल परिभ्रमण कर रहा है और जिस पर मदयुक्त सुन्दर शुण्ड वाले गज विचरण कर रहे है –

पृथूकदम्बकराजितं ग्रथित मालतमालवनाकुलम्।

लघु तुषार तुषारजलश्चयुतं धृतसदानसदाननदन्तिनम्।।[11]

---

[7] किरातार्जुनीयम् (७.३१) डॉ0 नर्मदेश्वर कुमार त्रिपाठी।
[8] किरातार्जुनीयम् (५.३६) डॉ0 राजेन्द्र मिश्र।
[9] किरातार्जुनीयम् (१.१८) डॉ0 कविराम कैलाश पाण्डेय।
[10] किरातार्जुनीयम् (१.२३) डॉ0 बाबूराम त्रिपाठी।

प्रस्तुत स्थल पर ' कदम्ब – कदम्ब ', दम्बक – दम्बक तमाल– तमाल , तुषार – तुषार , सदान – सदान रूप सार्थक – निरर्थक पदों का क्रम से आवृत्ति होने से यमक अलंकार है। अपने काव्य में कवि ने चित्रालंकारों को भी विशेष महत्त्व प्रदान किया है। सर्वतोभद्र , पादान्तादियमक, पादादियमक, गोमूत्रिकाबन्ध , प्रतिलोमानुलोमपाद , प्रतिलोमानुलोमार्थ , द्वयक्षर , एकक्षर इत्यादि रूप से चित्रालंकारों का भारवि ने चित्ताकर्षक प्रयोग किया है। किरातार्जुनीय का पंचदश सर्ग कवि की अलंकार प्रियता का सुन्दर निदर्शन है। सर्वतोभद्र द्वारा युद्ध स्थल का सुन्दर चित्र कवि ने अंकित किया है। युद्ध भूमि मदरूपी विशाल गजों की घटा छाई रहती है , यहाँ पर उत्साही – निरुत्साही सभी को युद्ध करना पड़ता है। इसमें वाक्कलह बहुत कम होता है और देवताओं को भी यह प्रोत्साहित करने वाला होता है।

खड्ग इत्यादि युद्ध के उपकरणों से सुसज्जित , गमन करते हुए अर्जुन के सौन्दर्य का चित्रण एकाक्षर पाद द्वारा किया गया है –

स सासिः सासुमूः सासो येयायेयाययायययः ।
ललौ लीलां ललोऽलोलः शशीशशि शुशीः शशन्।।[12]

इसी प्रकार भारवि ने एकाक्षर के प्रयोग से अनुष्टुप छन्द में अतिशय भाव – गम्भीर्य की अभिव्यक्ति की है। अर्जुन को पराजित देखकर प्रमथगणों को सम्बोधित करते हुए कुमार कार्तिकेय कहते हैं – हे विविध मुख युक्त प्रमथगणों! यह नीच विचार वाला पुरुष नहीं है न्यूवता को नष्ट कर देने वाला कोई देवता है। जिसका स्वामी विद्ध नहीं हुआ है, उसको विद्ध होने पर भी अविद्ध समझना चाहिए। अत्यन्त व्यथित व्यक्ति को पीड़ित करने वाला निर्दोष नहीं होता । इस दोष से यह रहित है –

न नोननुन्नो नुन्नेना नाना नानानना ननु ।
नुन्नोऽनुन्नो ननुन्नेनो नानना नुन्ननुन्ननुत।।[13]

निष्कर्ष – इस प्रकार हम कह सकते है कि भारवि ने उन्मुक्त रूप में अलंकारों का प्रयोग किया है किन्तु अलंकार के समुचित प्रयोग तथा आकर्षक संयोजन में कवि पूर्ण सफल है। काव्यरचना में अलंकृत काव्यशैली रूप इस नवीन रीति के भारवि स्वयं जनक हैं। इस तरह कवि की अलंकार प्रियता पर भी प्रकाश पड़ता है । इस अलंकृत शैली के विनियोग से निश्चित रूप से काव्य का बाह्य स्वरूप बहुत ही सुसज्जित तथा चित्ताकर्षक हुआ है। काव्य का शरीर तो अवश्य ही अत्यन्त अलंकृत है।

अतः इस प्रकार हम कह सकते है कि भारवि ने अत्यन्त सफलता पूर्वक प्रायः सभी प्रमुख अलंकारों का वर्णन काव्य में यथा स्थान काव्य संगत किया है। किरातार्जुनीयम् का साकल्येन परिशीलन करने पर जो

---

[11] किरातार्जुनीयम् (५.६) डॉ0 राजेन्द्र मिश्र।
[12] किरातार्जुनीयम् (१५.५) आचार्य श्रीनिवास शर्मा
[13]किरातार्जुनीयम् (१५.१४) डॉ0 नर्मदेश्वर कुमार त्रिपाठी।

अलंकार दृष्टिगोचर हुए वे निम्न इस प्रकार हैं – अतिशयोक्ति , अनुप्रास , अनुमान , अनुमान , अपह्नुति , अर्थत्रय वाचिन् , अर्थान्तन्यास , अर्थापति , अर्धभ्रमक , उत्प्रेक्षा , हेतूत्प्रेक्षा , उदात्त ,उपमा, ऊर्जस्वल , एकव्यंजन , एकावली , कारणमाला , काव्यलिंग गोमूत्रिकाबन्ध , छेकानुप्रास , तद्गुण, तुल्ययोगिता , दृष्टान्त , द्वयक्षर , निर्दशना , निरौष्ठय , परिकर , परिणाम, परिवृत्ति , पर्य्याय , पय्यांयोक्ति पूर्णोपमा, प्रतिलोम , प्रतिलोमानुलोमपाद, प्रेय , भाविक , भ्रान्तिमत्, माला , मालोपमा , मीलन, यथासंख्य , यमक , श्रृंखलायमक, रसवत् , रूपक , वस्तुध्वनि , वास्तव , विभावना , विरोध , विरोधाभास , विशेषोक्ति , विषम, वृत्त्यनुप्रास , व्यतिरेक , श्रृंखलायमक, श्लिष्टोपमा, श्लेष , संशय , संकर , संसर्ग , संसृष्टि , संदेह , सम , समपरिवृत्ति समासोक्ति , समाहित , समुच्चय , सर्वतोभद्र , सहोक्ति , सामान्य स्मरण , हेतूत्प्रेक्षा तथा स्वाभावोक्ति आदि शब्दालंकारों और अर्थालंकारों का सफलतापूर्वक प्रयोग कि

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 – संस्कृत साहित्य का बृहद इतिहास (डॉ0 पुष्पा गुप्ता)।

2 – किरातार्जुनीयम्(सटिप्पणमल्लिनाथकृत 'घण्टापथसहितज्योत्सना– हिन्दी व्याख्यासमुद्भासितम्) सम्पूर्ण।

3 – किरातार्जुनीयम् (प्रथम सर्ग) डॉ राजेन्द्र प्रसाद मिश्र।

4 – किरातार्जुनीयम् :'सुबोध' संस्कृत हिन्दी टीका प्रथम सर्ग।

5 – किरातार्जुनीयम् 'सर्वड.कषा', श्री बदरीनारायण मिश्र।

6 – किरातार्जुनीयम्: 'विजया' संस्कृत हिन्दी व्याख्या द्वितीय सर्ग, ब्रह्मानन्द त्रिपाठी ,शिवबालक द्विवेदी।

7 – श्री महाभारत, प्रो0मण्डन मिश्र।

8 – गीता–साधक संजीवनी ,स्वामी श्री रामसुखदास जी।

9 – किरातार्जुनीयम् : एक समीक्षा, डॉ प्रभा अवस्थी।

10 – किरातार्जुनीयम् "घण्टापथ" संस्कृत व्याख्या, डॉ सुधाकर मालवीय।

11 – गीता–शांकर भाष्य, आचार्य शंकर।

12 – संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, आचार्य श्री कपिलदेव द्विवेदी ।

13 – श्रीमद्भगवदगीता – तत्त्व विवेचनी, श्रीजयदयालजी, गोयन्दका जी।

14 – किरातार्जुनीयम् : 'घण्टापथ' सुधा टीका, श्री गंगाधर मिश्र।

15 – किरातार्जुनीयम् : संस्कृत टीका, आचार्य शेष राज शर्मा।

16 – किरातार्जुनीयम् डॉ0 पंचबहादुर सिंह।

17 – किरातार्जुनीयम् डॉ0 कविराम कैलाश पाण्डेय।

18 – किरातार्जुनीयम् डॉ0 डॉ0 नर्मदेश्वर कुमार त्रिपाठी।

19 – करातार्जुनीयम् श्री बदरी नारायण मिश्र।

20 – किरातार्जुनीयम् डॉ0 बाबूराम त्रिपाठी।